बदलाव की लहर

पामेला फ़िलीपोज़

पठान शमीम टैक्सी चलाती हैं, सत्रह घंटे लगातार गाड़ी चलाना उनके लिए आम बात है। वह तीस वर्षीय तलाकशुदा महिला है जो अपनी व अपने बेटे की परवरिश के लिए अहमदाबाद और मुंबई के बीच टैक्सी चलाती है। शमीम उन मुसलमान महिलाओं में से एक है जिसने गुजरात नरसंहार के बाद राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा आयोजित जनसुनवाई में अपना पक्ष पेश किया था। शमीम अपने बालों की एक चोटी गूंथती है और बुर्का नहीं पहनतीं। उसका कहना है "पर्दा बुर्का पहनने से ही नहीं किया जाता। शर्म आंखों का लिहाज़ है यह कपड़ों से नहीं होती।"

हालांकि क्रांति और बदलाव एक शमीम के व्यवहार से नहीं आता पर इसमें कोई संदेह नहीं है कि बदलाव की लहर अब चल चुकी है। शमीम की तरह ही और बहुत सी मुस्लिम महिलाओं ने बुलंद हौसलों के साथ राख से दोबारा ज़िंदगी शुरू करने का जीवट दिखाया है। इंदौर की सादिया को ही लें जिसने पति के हिंसक व्यवहार से निजात पाने के लिए न सिर्फ़ अपनी शादी तोड़ दी बल्कि दहेज में दी गई पाई-पाई का हिसाब करके सभी सामान वापस ले लिया। उसने हताशा और दुख के बदले सम्मान और साहस दिखाया।

आज वो सभी सवाल जिन्हें पहले कभी भी उठाया नहीं गया मुस्लिम समाज में मुखरित किये जा रहे हैं। एक जनसुनवाई के दौरान युवा महिला छात्राओं ने जानना चाहा कि केवल औरतों को ही पर्दा क्यों करना पड़ता है? चौदह-पंद्रह वर्ष की बच्ची का निकाह करने की इजाज़त समाज कैसे देता है? लड़कों को अवसर दिए जाते हैं पर लड़कियों को चारदीवारियों में क्यों ढकेल दिया जाता है? बुर्का पहनकर सेना में दाखिला पाया जा सकता है क्या? लड़कियों पर दहेज हिंसा क्यों होती है? पति के छोड़ने पर कलंक का भार लड़कियां क्यों ढोती फिरती है? सवाल अनगिनत थे। पर एक सवाल जिसने बदलाव की नई लहर की गंभीरता को उजागर कर दिया वह कलकत्ता से आई एक लड़की ने उठाया था- कुरान में दर्ज कुछ ऐसी प्रथाओं जैसे चोरों के हाथ काट देना पर अमानवीय और मानवाधिकार हनन के आधार पर प्रतिबंध लगा दिया गया है। इसी तरह महिलाओं के लिए दर्ज दकियानूसी और महिला अधिकार विरोधी प्रथाओं पर प्रतिबंध क्यों नहीं लगाया जा सकता?

दिल्ली में मुस्लिम महिलाओं पर शोध अध्ययन से जुड़ी दो नारीवादी अकादमिक ज़ोया हसन व ऋतु मेनन के विचार में मुस्लिम महिलाओं के सामने विकट समस्या है शिक्षा और रोज़गार का अभाव जो उन्हें आगे बढ़ने से रोकती है।

यद्यपि शिक्षा को लेकर जागरूकता में भी बढ़त पाई गई है। अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के समाजशास्त्र और सामाजिक कार्य विभाग के प्राध्यापक अब्दुल वहीद बताते हैं- "मैंने बरेली ज़िले के बहेरी कस्बे के मुसलमान बंजारों पर एक शोध किया था। मैंने पाया कि हर संस्थान और शिक्षा विभाग में मुस्लिम लड़कियां मौजूद थीं। वे स्कूल, कालेज जाएं, चाहे घर पर रहकर पढ़ें पर शिक्षा की अहमियत उनके लिए बहुत है। बीस साल पहले ऐसा नहीं था।"

बदलाव की इस लहर की गिरफ्त में सामुदायिक नेता भी आ चुके हैं। चेन्नई में कार्यरत एक वकील तथा *तमिलनाडु अल्पसंख्यक आयोग*

की पूर्व अध्यक्ष बदर सईद कहती हैं कि बहुविवाह प्रथा का खात्मा होना चाहिए। उनके विचार में जितने मौलवी हैं उतने ही फतवे वे जारी करते रहते हैं इसलिए कानूनों का सूत्रबद्ध किया जाना बेहद महत्वपूर्ण हो गया है। मुंबई के एक महिला समूह ने एक नया निकाहनामा भी तैयार किया है जिसमें एक महिला को अपने पति को तलाक देने का अधिकार दिया गया है अगर वह निकाहनामे में उल्लेख की गई सभी शर्तों को पूरा नहीं करता।

इसी तरह दो साल पूर्व *इस्लामी अध्ययन संस्थान तथा समाज व धर्म निरपेक्षता अध्ययन सेंटर* द्वारा आयोजित जनसुनवाई में इस बात पर सहमति व्यक्त की गई थी कि मुस्लिम समुदाय को *मुस्लिम पर्सनल लॉ* के प्रावधानों को सर्वोपरि और हद से ज़्यादा अहम मानने वाले रवैये में परिवर्तन लाना होगा। इस बैठक के अंत में पारित प्रस्ताव के अनुसार यह तय किया गया था कि *मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड* के साथ विमर्श की प्रक्रिया शुरू की जाएगी। ये कानून अंग्रेज़ों द्वारा बनाए गये थे और इन्हें पूरी तरह शरीयत आधारित नहीं कहा जा सकता। यह भी उल्लेख किया गया कि इस कानून में कई प्रगतिशील बदलाव के उदाहरण मौजूद हैं। मसलन मौलाना अशरफ थानवी ने 1939 में *निकाह रद्द कानून* पारित किया था जिसके माध्यम से उन मुस्लिम महिलाओं को राहत दी गई थी जिनके पति लापता या गायब थे। प्रस्ताव के अनुसार इस प्रकार की अगुवाई करने की आज भी ज़रूरत है।

विडम्बना यह है कि एक ओर भारत में मुस्लिम *महिला कानून 1986* के तहत तमाम मुस्लिम महिलाओं को उनके हक़ों से महरूम किया जा रहा है और उन्हें तलाक के पश्चात गुज़ारा भत्ता पाने का अधिकार नहीं दिया जा रहा है। वहीं दूसरी ओर पाकिस्तान व बंगलादेश जैसे इस्लामी देशों में *मुस्लिम पर्सनल लॉ* में महत्वपूर्ण सुधार किये जा रहे हैं। इंडोनेशिया में बहुविवाह पर प्रतिबंध तथा तुर्की व टयूनिसिया में निकाह व तलाक पर नियंत्रण करने वाले कानून बनाये गये हैं।

पाकिस्तान में *पारिवारिक कानून अधिनियम 1961* के तहत बहुविवाह पुरुषों का एकाधिकार नहीं रहा है। दूसरी शादी करने के लिए पहली पत्नी की लिखित रज़ामंदी अनिवार्य है। सभी निकाह पंजीकृत होने चाहिए जिससे तीन बार तलाक कहकर उन्हें रद्द करना संभव न हो तथा हर तलाकशुदा महिला को गुज़ारा भत्ता पाने का अधिकार है।

पाकिस्तान में *पर्सनल लॉ* में सुधार की प्रक्रिया एक अनोखे किस्से से हुई थी। 1955 में पाकिस्तान के वज़ीरे-आज़म, मुहम्मद अली अपनी एक पत्नी के रहते-रहते एक दूसरी महिला से निकाह करना चाहते थे। इसी बात पर शुरू हुआ औरतों का विरोधी आंदोलन जिसने विवाह कानूनों में संशोधन की प्रक्रिया की शुरूआत की। पाकिस्तानी महिलाओं ने मांग रखी कि इस्लाम के अनुसार "सभी पत्नियों के साथ समान देखभाल व व्यवहार किया जाना चाहिए।" ये शर्त पूरी करना असंभव है लिहाज़ा कानूनी संशोधन किया जाना ज़रूरी हैं। महिला सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के विचार में इस्लाम बहुविवाह की इज़ाजत इसलिए देता है ताकि इंसान व्यभिचार और अनैतिक संबंधों से बचे। पर पुरुष इस कानून को अपनी सहूलियत अनुसार इस्तेमाल करके हरम बनाने की कोशिश करते हैं। अगर वे इस्लामी कानून की पाबंदियों का पालन करें तो दूसरी शादी करना असंभव हो जाता है।

पर भारत में *मुस्लिम पर्सनल लॉ* में सुधार लाना एक जटिल प्रक्रिया है। *जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय* के प्राध्यापक इम्तयाज़ अहमद का मत है कि बदलाव का अर्थ है नवीन और दकियानूसी विचारों के बीच संघर्ष। "हमारे समाज में बढ़ती धार्मिक कट्टरता को देखते हुए प्रगतिशील विचारों की विजय मुश्किल लगती है। परन्तु अभी भी उम्मीद बाकी है। जिस प्रकार समुदाय की महिलाएं अपने हक़ों को लेकर जागृत हो रही हैं, परिवर्तन दूर नहीं है। *महिलाएं मुस्लिम लॉ बोर्ड* में तैंतीस प्रतिशत आरक्षण की भी मांग कर रही हैं। विवाह अनुबंध, गुज़ारा भत्ता आदि मुद्दे भी सर्वोपरि हैं। अगर बहस और बातचीत जारी रहेगी तो बदलाव की लहर आंधी भी बनेगी। इसलिए इस विचार-विमर्श को नियमित रूप से जारी रखना होगा।

इंडियन एक्सप्रेस में पूर्व प्रकाशित